२८२१

ॐ

अथ श्रीशिवमहिम्नस्तोत्रप्रारम्भः

...विद्यामन्दिर
देवप्रयाग (गढ़वाल-हिमालय)
व्यवस्थापक- पं. चक्रधर जोशी

शिवपञ्चाक्षर-शिवस्तुति-रुद्राष्टक, शिवमहिम्नस्तोत्र, कथा, विल्वाष्टक, शिवापराधक्षमापन
शिवताण्डवे न च समन्विता

श्री विशालमणिशर्मोपाध्याय. मूल्यम् ।=)

CC-0. Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

२४५२

॥ अथ श्रीरुद्राभिषेकमाहात्म्यम् ॥

श्रीशिव उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि रुद्रासेचनकर्मणः ॥ महिमानं मया प्रोक्तं सनकाय शुचिव्रते ॥ १ ॥
देव्युवाच ॥ कदा स मुनिशार्दूलः प्राप्तस्त्वां केन हेतुना ॥ कथं रुद्राभिषेकस्य महिमा वर्णितस्त्वया ॥ २ ॥ श्री शिव
उवाच ॥ एकदा बालरूपः स विचरन् पृथिवीतले ॥ ददर्श क्लिष्टकर्माणं लोकं दुःखमवापह ॥ ३ ॥ तद्दुःखदुःखितो
नूनं कैलासं गतवान् द्रुतम् ॥ लोकानां दुःखसन्दोहं कथयामास मां प्रति ॥ ४ ॥ पप्रच्छ च लघूपायं दुःखनाशाय
देहिनाम् ॥ मया यत्कथितं भद्रे तच्छृणुष्वावधारय ॥ ५ ॥ मुनिसत्तम ते दुःखं दृष्ट्वा मे मानसं ध्रुवम् ॥ उपकाराय
लोकानां शोचते किञ्चिदुत्तमम् ॥६॥ मुहुर्मुहुश्चिन्त्यमानमुपायमेकमेव हि ॥ रुद्राभिषेकादितरं नोत्प्रेक्ष्ये साम्प्रतं मुने
॥ ७ ॥ सर्वकर्माणि सन्त्यज्य सुशान्तमनसो यदा ॥ रुद्राभिषेकं कुर्वन्ति दुःखनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥ ८ ॥ जलेन वृष्टि-
माप्नोति व्याधिशान्त्यै कुशोदकैः ॥ दध्ना च पशुकामाय श्रियै इक्षुरसेन च ॥ ९ ॥ मध्वाज्येन धनार्थी स्यान्मुमुक्षुस्ती-
र्थवारिणी ॥ पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति पयसां चाभिषेचनात् ॥१०॥ वन्ध्या वा काकवन्ध्या वा मृतवत्सा च याङ्गना ॥ सद्यः
पुत्रमवाप्नोति पयसां चाभिषेचनात् ॥११॥ श्रीरुद्रस्य प्रसादेन बद्धो मुच्येत बन्धनात् ॥ भीतो भयात्प्रमुच्येत वन्ध्या
पुत्रमवाप्नुयात् ॥१२॥ मूर्खो वाचामधीशः स्याद्दरिद्रो धनिनां वरः ॥ मूको वक्ता भवेत्पंगुर्गिरिं लंघयते द्रुतम् ॥१३॥
मनसा कर्मणा वाचा शुचिः संगविवर्जितः ॥ कुर्याद्रुद्राभिषेकं च प्रीतये शूलपाणिनः ॥१४॥ सर्वान् कामानवाप्नोति
लभते परमां गतिम् ॥ नन्दते च कुलं पुंसां श्रीमच्छम्भुप्रसादतः ॥१५॥ रुद्राभिषेककर्तॄणां विप्राणां प्रीतिहेतवे ॥
गोभूहिरण्यवासांसि सशक्त्यं प्रतिपादयेत् ॥१६॥ वित्तशाठ्यं न कर्तव्यं कर्मण्यस्मिन् द्विजातिभिः ॥ दातव्यं द्विजव-
र्येभ्यो गृह्णीयादाशिषः शुभाः ॥१७॥ एवं कृते मनुष्याणां वाञ्छासिद्धिः सुनिश्चिता ॥ मोदन्ते बन्धुभिर्लोके लभन्ते
परमं पदम् ॥१८॥ इति श्रीरुद्राभिषेकमाहात्म्यम् ॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशाय नमः

अथ शिवमहिम्नस्तोत्रम्

पुष्पदन्त उवाच

महिम्नः पारन्ते परमविदुषो यद्यसदृशीस्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्ना-
स्त्वयि गिरः । अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधिगृणन् ममाप्येष स्तोत्रे
हर ! निरपवादः परिकरः ॥ १ ॥

हे हर ! (आप सब दुःखों का हरण करते हैं अतः हर हैं) अर्थात् हम सङ्कटग्रस्तों के सङ्कट हटाने में आपको दूसरा व्यापार नहीं करना होगा, आपका नाम ही हर है । हे शम्भो ! आपकी महिमा की अन्तिम सीमा (अर्थात् आप इतने बड़े हैं, यह स्वरूप है, यह महिमा में आदि) को न जानने वाला जो स्तुति करता है, वह स्तुति यदि उचित (उत्तम) नहीं है तो ब्रह्मा आदि सर्वज्ञों से की गयी स्तुतियां भी आपके योग्य नहीं है । (क्योंकि आपका परिमाण नहीं है, अतः वे सर्वज्ञ होते हुये भी आपके ज्ञान में अधूरे ही हैं) इसके बाद बात यह है कि जैसे चिड़ियां

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

अथाह आकाश में अपनी शक्ति के अनुसार उड़ती हैं, उसी तरह अपनी बुद्धि के अनुसार कोई भी भक्त आपका स्तुति-गान करता हुआ हास्य का पात्र नहीं हो सकता। क्योंकि

सा वाग्यया तस्य गुणान् गृणीते करौ च तत्कर्मकरौ मनश्च।
जिव्हा सती दादुरिकेव सूत! न चोपगायत्युरुगायगाथा॥

वही वाणी है, जिससे भगवान् का गुणगान करें। जो हाथ भगवान् का काम करते हैं, तथा जो मन उनका मनन करते हैं वही श्लाघ्य हैं। जिस जीभ ने भगवान् का गुणगान नहीं किया, वह मेढ़क की जीभ के सरीखे है। अतः हमारा भी यह आरम्भ इस स्तोत्र में निन्दायोग्य नहीं है॥ १॥

स्तुति के विषय में अपना तथा ब्रह्मा आदि का 'साम्य' युक्ति पूर्वक सिद्ध कर, भगवान्! आप स्तुति से जानने योग्य नहीं हैं इस अभिप्राय से पुनः स्तुति करते हैं:—

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयोरतद्व्यावृत्त्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि। स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः॥ २॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

हे हर ! यह सम्बोधन प्रथम श्लोक का यहाँ भी संबंध रखता है।

हे हर ! आपकी सगुण तथा निर्गुण महिमा वाणी एवं मन का विषय नहीं है। वेद भी कहता है, कि मन सहित वाणी आदि सभी उस परमात्मा को न पाकर लौट आते हैं (यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह) जिस महिमा का वर्णन वेद भी चकित-सा होकर करता है (अतद्व्यावृत्त्या) अर्थात् श्रुति (वेद) सगुण निर्गुण दोनों का वर्णन हो जाती है। जैसे सगुण का जगत् से अभेद तथा निर्गुण का स्व-प्रकाश वर्णन आदि। अतः ऐसी उस महिमा की स्तुति कौन कर सकता है ? कोई नहीं। क्योंकि सगुण में कितने गुण हैं तथा निर्गुण में कैसे जाने जा सकते हैं, यह जानना कठिन है। परन्तु नई भव्य वस्तु के लिये किसका मन तथा वचन नहीं खिंच जाता है। इसलिये आपके महिमा स्तोत्र में मैं भी उद्यत हूँ ॥ २ ॥

अब शङ्का इस बात की होती है, कि प्रसन्नता किसी एक अपूर्व वस्तु के प्राप्त होने पर ही होती है और भगवान् सर्वज्ञ तथा नित्य हैं तो यह स्तुति उनके अपूर्व वस्तु न होने के कारण निष्फल होगी। इस शंका को दूर करते हुये स्तुति की सफलता बताते हैं :—

मधुस्फीतावाचः परमममृतं निर्मितवतस्तव ब्रह्मन्किम्वागपि सुरगुरोर्वि-

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

स्मयपदम् । मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः पुनामीत्यर्थेऽस्मिन्पुर-मथन ! बुद्धिर्व्यवसिता ॥ ३ ॥

हे ब्रह्मन् ! हे विभो ! बृहस्पति आदि से की गयी स्तुति क्या आपके चमत्कार का कारण हो सकती है ? (अर्थात् नहीं) क्योंकि बिना परिश्रम के ही श्रीमान् के निःश्वास द्वारा निकली हुई, एवं सब अलंकारों से युक्त, मधु के समान मधुर तथा उत्तम अमृत-सी वह वेद वाणी अत्यन्त स्वादु है । तात्पर्य यह है कि यदि बृहस्पति आदि की स्तुति में कोई विशेषता नहीं है तो हमारी क्या गणना ! परन्तु हे पुरमथन ! त्रिपुरासुर के मारने वाले प्रभो ! आपके गुणगान से जो पुण्य होगा उससे मेरी बुद्धि निर्मल होगी । इस अभिप्राय से आपकी स्तुति में मेरी बुद्धि उद्यत हुई है ॥ ३ ॥

तवैश्वर्य्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत् त्रयीवस्तुव्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु । अभव्यानामस्मिन्वरद रमणीयामरमणीम् विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जड़धियः ॥४॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

हे वरद (वाञ्छित वस्तु के देने वाले) ! जगत की सृष्टि, रक्षा, प्रलय करने वाला, तथा

तीनों (ऋग्, यजु, साम) वेदों से गाया गया एवं तीन (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) रूपों में रहने-वाला जो आपका ऐश्वर्य है उसको नष्ट करने के लिये कुछ मूर्ख व्याक्रोशी (आक्षेपपूर्वक ऊंचे स्वर से विरुद्ध भाषण) करते हैं, जो कि निन्दा मनोहर नहीं होती हुई भी भाग्यहीनों को मनोहर-सी लगती है ॥ ४ ॥

विरोधी दल किन-किन शंकाओं को करता है । उनका उत्तर देते हुये स्तुति करते हैं :—

किमीहः किं कायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनम् किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च । अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसरदुःस्थो हतधियः कुतर्कोऽयं कांश्चिन्मुखरयति मोहाय जगतः ॥ ५ ॥

हे वरद ! आप तर्क करने के योग्य नहीं हैं, आपके विषय में संसार को मोह में डालने वाला कुतर्क बहुत से दुष्टबुद्धियों (मूर्खों) को वाचाल (बहु बोलने वाला) बना रहा है । कुतर्क यह है :—कि वह धाता (परमेश्वर) त्रिभुवन की सृष्टि करता है, यह सिद्धान्त है । तो जैसे कुम्हार घड़ा बनाते समय चाक चलाना आदि कई एक व्यापार करता है; वैसे ही ईश्वर भी यदि संसार को बनाता है तो उसकी चेष्टा क्या है? वह किस शरीर से, किन साधनों से, कौन से

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

आधार पर एवं किस उपादान कारण से रचता है। यदि उसमें ये सभी व्यापार हैं तो वह ईश्वर कैसे ? तथा यदि सभी व्यापार नहीं है तो जगत्‌का बनाने वाला कैसे ? इत्यादि। उ०जैसे आँख-से दूसरी चीज देखी जा सकती है, न कि आँख अपने रूप को देखती है उसी तरह सब जगत्‌एवं तर्क के अधिष्ठान आप ही हैं। अतः किसी भी तर्क से प्रत्यक्ष नहीं किये जा सकते। वेद भी कहता है-(ईश्वरे तर्काप्रतिष्ठानात्। ईश्वर में तर्क नहीं लगता। अतः यह सिद्ध है, कि दुष्ट लोग आप में तर्क करके संसार को मोह में डाल देते हैं ॥ ५ ॥

इस प्रकार विरोधी तर्क का खण्डन कर उचित तर्क का समर्थन करते हैं :—

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगतामधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति। अनीशो वा कुर्याद् भुवनजनने कः परिकरो यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर ! संशेरत इमे ॥ ६ ॥

हे अमरवर ! (सब देवों में श्रेष्ठ) क्या ये भू (पृथ्वी) आदि लोक अवयव (खण्ड) वाले होते हुए भी जन्म रहित हैं। अर्थात् नहीं। तथा क्या पृथ्वी आदि की सृष्टिक्रिया बिना किसी अधिष्ठाता (कर्ता) के हो सकती है ? अर्थात् नहीं। और ईश्वर

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri.

से भिन्न यदि कोई पुरुष इसका कर्ता है, तो उसके पास रचना की क्या सामग्री है? क्योंकि जीव तो अपने शरीर की रचनाओं को ही नहीं जानता चौदहों भुवन का तो दूर है। इस प्रकार आप सब प्रमाणों द्वारा सिद्ध हैं। इसलिए वे महान् मूर्ख हैं जो आपके विषय में सन्देह करते हैं॥ ६॥

इस प्रकार भगवत्–विमुखों का खण्डन कर सम्पूर्ण शास्त्रों का तात्पर्य साक्षात् या परम्परा से ईश्वर में ही है। ऐसी स्तुति कर रहे हैं:—

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च। रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषाम् नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव॥ ७॥

हे अमरवर! जैसे सभी नदियाँ सीधे या एक दूसरी नदी से सम्बन्ध करके समुद्र में ही जाती हैं वैसे हीं त्रयी (वेद आदि अठारह विद्या––पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रांगमिश्रिताः। वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश। ये चौदह, तथा आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, अर्थशास्त्र ये चार) सांख्य, योग, शैवमत, वैष्णवमत आदि अनेक मत तथा आपको प्राप्त करने के अनेक

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

मार्ग हैं । सभी भिन्न भिन्न मार्ग ग्रहण कर लेते हैं । परन्तु साक्षात् या परम्परया आपको प्राप्त करना ही सब का ध्येय है । जैसे समुद्र में गङ्गा सीधे सीधे जाती है, रावती आदि सरयू आदि से मिलकर जाती हैं, वैसे ही वेदान्ती सीधे जाते हैं । कुछ मत वाले परम्परया जाते हैं । परन्तु सब का ध्येय आपका चरण ही है ॥ ७ ॥

उपर्युक्त साधनों से शङ्काओं को दूर कर प्रसिद्ध नवीन रूप में वर्तमान शिव की स्तुति करते हैं :—

महोक्षः खट्वाङ्ग परशुरजिनं भस्मफणिनः कपालं चेतीयत्तव वरद ! यन्त्रोपकरणम् । सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भ्रूप्रणिहितां नहि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥ ८ ॥

हे वरद (वर देने वाले) ! यद्यपि आप परिपूर्ण परमेश्वर हैं, तथापि महोक्ष (बूढ़ा बैल), खट्वाङ्ग (खाटका अवयव शस्त्र-विशेष) परशु (टङ्क-कुठार), अजिन (चर्म), भस्म, फणि (सर्प), कपाल (अनेक मनुष्यों की खोपड़ी) ये आपके तन्त्रोपकरण (कुटुम्ब धारण के साधन) हैं । यह संशय करें, कि जो खुद ऐसा दरिद्र है, वह क्या दूसरे को दे सकता है । तो

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

ऐसा नहीं, प्रभो ! आपके भ्रू विक्षेप मात्र से दी गयी भिन्न भिन्न ऋद्धियों को देवता लोग धारण करते हैं। तो यह कहें कि स्वयं उसका उपभोग क्यों नहीं करते ? उत्तर—अन्य सभी विषय-वासना-मोहित हैं। परन्तु स्वप्रकाश आनन्दस्वरूप ब्रह्म को विषय का भ्रमजाल नहीं लुभा सकता। अर्थात् आप माया से परे हैं आपको किसी वस्तु की आवश्यकता ही नहीं है ॥ ८ ॥

ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये। समस्तेऽप्येतस्मिन्पुरमथन ! तैर्विस्मित इव स्तुवञ्जिह्रेमित्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥ ९ ॥

हे पुरमथन ! (त्रिपुरासुर के नाश करने वाले) कोई (सांख्य-पातञ्जलमतानुयायी) इस जगत् को ध्रुव (नित्य) मानाता है कोई (बौद्ध) अध्रुव (अनित्य), तथा कोई (तार्किक) नित्य अनित्य दोनों मानता है। ऐसी हालत में हे प्रभो ! जो कि भिन्न भिन्न प्रकार से भिन्न-भिन्न रूप जगत् को मानते हुए आपकी स्तुति भी भिन्न भिन्न किये हैं उनसे चमत्कार को प्राप्त मैं स्तुति करने में लज्जित नहीं हो रहा हूं कि लोग कहेंगे कि यह स्तुति करना नहीं जानता। किन्तु हमारी वाचालता ही हमें इस स्तुति में निर्लज्ज बना रही है और स्तुति करने को उद्यत कर रही है ॥ ९ ॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

तवैश्वर्यं यत्नाद् यदुपरि विरञ्चिर्हरिरधः परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कंधवपुषः । ततो भक्ति श्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरीश ! यत स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्नफलति ॥ १० ॥

हे गिरीश ! हे शम्भो आपकी सेवा क्या नहीं दे सकती ? अर्थात् सभी कुछ दे सकती है ! आपकी सेवा से आपका साक्षात्कार तक हो सकता है । हे भगवन्, आपकी तेजः पुञ्जमयी मूर्ति के ऐश्वर्य का माप करने के लिये यत्न पूर्वक ऊपर ब्रह्मा नींचे विष्णु गये, परन्तु थाह नहीं पाये । हम सरीखे की क्या बात है । बाद में जब भक्ति-श्रद्धा से आपकी स्तुति किये, तो आप स्वयं स्थिर हो गये अर्थात् स्तुति से जब आप प्रसन्न हुए, तब आपकी थाह लगी । इससे यह निश्चय प्रतीत होता है, कि आपकी स्तुति अवश्य फलद होती है ॥ १० ॥

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरम् । दशास्यो यद्बाहूनभृत रणकण्डू-
CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri
परवशान् । शिरः पद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुर-

हे त्रिपुरहर ! रावण ने जो आपके चरणकमलों में अपने नवमस्तकरूप कमलपुष्प की श्रेणी
(पंक्ति) को बलि (उपहार) में चढ़ा दिया था, उसके उसी निश्चल भक्ति का यह प्रभाव है
कि तीनों लोक में उसके वैर का कारण भी कोई नहीं रह सका। अर्थात् अपने पराक्रम से इन्द्र,
कुबेर आदि को भी जीत लिया था और रण (युद्ध) के लिये बराबर खुल जाने वाली २० बीस
भुजाओं को धारण किया था। अर्थात् कोई उससे लड़ने वाला नहीं था। अतः उसकी बाहें खाली
रहने के कारण खुजलाती-सी रहती थीं। यह सभी आपकी भक्ति का ही फल है ॥ ११ ॥

अमुष्य त्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनम् बलात्कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ
विक्रमयतः। अलभ्या पातालेऽप्यलसचलितांगुष्ठशिरसि प्रतिष्ठा त्वय्यासीद्ध्रु-
वमुपचितो मुह्यति खलः ॥ १२ ॥

हे त्रिपुरहर ! आपकी सेवा से ही प्राप्त बलवाले, अपनी भुजाओं का आपके निवासस्थान
कैलास में बलात्कार पराक्रम दिखलाने वाले रावण को पाताल में भी शरण नहीं मिली। क्योंकि
आपने धीरे से अपने अंगूठे से दबा दिया। अतः वह इतना नीचे जाने लगा कि पाताल में भी
शरण नहीं रही। शङ्का यह होती है कि उन्हीं से बल प्राप्त कर फिर उन्हीं के साथ ऐसा क्यों

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

किया ? उ०—दुष्ट मनुष्य कुछ बढ़ जाने पर अपने को तथा अपनी वृद्धि के कारणों को भी नहीं समझ पाता ।

यहाँ ऐसी कथा है कि किसी समय रावण अपने बाहुबल के घमण्ड से कैलास पर्वत को लङ्का लाने के लिए गया, और हिलाना शुरू किया, कि श्रीपार्वती ने बताया, तब श्री शिवजी ने धीरे से अपना अंगूठा दबाया । वह इतना नीचे चला, कि पाताल में भी शरण नहीं मिली ॥ १२ ॥

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद ! परमोऽच्चैरपि सतीमधश्चक्रे बाणः परिजनविधेय-त्रिभुवनः । न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसितरि त्वच्चरणयोर्न कस्याप्युन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥ १३ ॥

हे वरद ! (वर देने वाले) सेवक के समान तीनों भुवन हैं जिसके ऐसे बाणासुर ने सुत्रामा (इन्द्र) की बढ़ी-चढ़ी सम्पत्ति को भी नीचा कर दिया । हे प्रभो ! इसमें कोई आश्चर्य नहीं है । क्योंकि वह आपका प्रधान भक्त था । मैं तो यह कहता हूं कि आपके चरणों में किया हुआ नमस्कार किसकी उन्नति के लिए नहीं होता । अर्थात् सभी की उन्नति का कारण होता है ॥ १३ ॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Devi Prayag. Digitized by eGangotri

अकाण्डब्रह्माण्डक्षयचकितदेवासुरकृपा विधेयस्याऽऽसीद्यस्त्रिनयनविषं संहृतवतः। स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो विकारोऽपिश्लाघ्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः ॥ १४ ॥

हे त्रिनयन! (तीन नेत्र वाले) समुद्र-मथन से निकले कालकूट नामक महाविष का संहार (पान) करने वाला कोई नहीं था क्योंकि ब्रह्मा, विष्णु आदि सभी डरते थे। परन्तु सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के नाश की आशंका से चकित इन्द्र, कुबेर आदि देवगण तथा सभी राक्षसगण पर तथा समस्त ब्रह्माण्ड पर कृपा कर जो आपने उस महाविष का पान किया है, उससे गले में जो कल्माष (कालापन) हो गया है वह क्या आपकी शोभा को नहीं बढ़ाता है? किन्तु बढ़ाता ही है। हे भगवन्! संसार के भय को दूर करने का जिसका व्यसन है उसके यहाँ विकार भी प्रशंसा के योग्य हो जाता है ॥ १४ ॥

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे निवर्त्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः। सपश्यन्नीश त्वामितरसुरसाधारणमभूत् स्मरःस्मर्तव्यात्मा नहि वशिषु पथ्यः परिभवः ॥ १५ ॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

हे ईश ! (हे सर्व समर्थ) जिस कामदेव के बाणों ने, देवता असुर, मनुष्य आदि जितने जगत् में हैं–सबको जीत लिया, कहीं भी निष्फल नहीं हुए, ऐसा अस्त्रवाला कामदेव घमण्ड के मारे अन्धा होकर आपको भी अन्य देवताओं के सरीखे समझ कर गया। परन्तु फल क्या हुआ कि वह स्मरण करने योग्य हो गया (अर्थात् आपने उसे भस्म करके नाममात्र ही शेष कर दिया) क्योंकि जितेन्द्रियों का अनादर कभी भी कल्याणकारी नहीं होता, तो आप तो सार्वशक्तिमान् हैं, और जो सबसे बड़े घमंडी तथा दुष्ट होते हैं उनको आप ही दुरुस्त करते हैं ॥ १५ ॥

मही पादाघाताद्व्रजति सहसा संशयपदं पदं विष्णोर्भ्राम्यद् भुजपरिघ-रुग्णग्रहगणम् । मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता ॥ १६ ॥

हे ईश ! आप यद्यपि जगत् की रक्षा के लिए नाचते हैं, तथापि नृत्यकाल में पृथ्वी सङ्कट में पड़ जाती है, कि कहीं नीचे न चली जाऊं । आपकी घूमती हुई मुद्गर सरीखी भुजाओं की चोटों से तारागण पीड़ित हो जाते हैं तथा खुली हुई जटाओं से बराबर पीटा गया स्वर्गलोक का

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

तट-प्रदेश दुर्दशा में पड़ जाता है ।

शङ्का :-श्री महादेवजी ऐसा हानि कर कार्य क्यों करते हैं ? उ०-अहो ! (प्रभुता वामैव) उलटी होती है अर्थात् सम्पत्तिशाली एक साधारण मनुष्य से भी कुछ अच्छा कार्य करते हुए कुछ उपद्रव हो ही जाता है। तो यदि संसार के रक्षार्थ नाच करते समय आपसे कुछ हो जाता है, तो क्या हुआ ?

ऐसी कथा है कि किसी राक्षस ने महादेव जी को प्रसन्न करके यह वरदान प्राप्त किया था कि शाम को हमें अथाह बल हो जाय तो जब वह अपने बल से मतवाला होकर संसार के नाश के लिए तैयार होता है तब श्री शङ्कर जी अपने नाच में उसे फंसा देते हैं॥ १६ ॥

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते। जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमित्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम-दिव्यं तव वपुः॥ १७ ॥

ईश ! आकाश में व्याप्त तथा तारागणों की चमक से चमकता हुआ फेनवाला महान् वह आकाशगङ्गा का प्रवाह आपके शिर में छोटी सी बूंद जैसा दिखाई पड़ रहा है। जिस प्रवाह ने हीं इस जगत् के सातों समुद्रों को भरा है, जिससे यह पृथ्वी समुद्र की परिधिवाली कही जाती है,

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

अर्थात् जिससे सात समुद्र भरे गये ऐंसी आकाशगङ्गा (भागीरथी, भोगवती नाम की) आपकी जटा में ऐसी सिमिट गयी कि एक छोटी सी बूंद जैसी बन गयी इसीसे आपकी दिव्य मूर्ति का महत्व सिद्ध हो रहा है। अधिक कहना क्या है ॥ १७ ॥

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो रथांगे चन्द्रार्कौ रथचरण-पाणिः शर इति। दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधिर्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतंत्रताः प्रभुधियः ॥ १८ ॥

हे ईश ! आपके सामने तृणके समान जो त्रिपुरासुर था उसके जलाने के लिये आपने यह क्या आडम्बर रचा। पृथ्वी को रथ बनाया, ब्रह्मा को सारथि, पर्वतराज मेरु को धनुष तथा सूर्य-चन्द्रमा को चक्र और श्रीविष्णु भगवान् को बाण बनाया। आपने यह बड़ा ही आडम्बर किया। क्योंकि कोई साधारण जन भी किसी तृण के लिये कुठार नहीं उठाता, आप तो सर्व शक्तिमान् हैं। अथवा हे प्रभो ! सही है पूर्णशक्तिशाली लोग अपने वशवर्त्तियों के साथ क्रीडापूर्वक कुछ करते हुये, परतन्त्र नहीं कहे जाते ॥ १८ ॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयोर्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्र-

कमलम् । गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर ! जागर्ति जगताम् ॥ १६ ॥

हे त्रिपुरहर ! श्रीविष्णु भगवान् ने आपके चरणों में एक हजार कमलों की भेंट चढ़ाते समय एक कमल के कम हो जाने पर (जिसको आपने परीक्षा के लिये छिपा रक्खा था) नियम भङ्ग के डर से अपने नेत्ररूपी कमल को ही उखाड़कर भेंट कर दिया । हे प्रभो ! इसी उत्कट भक्ति का फल सुदर्शन चक्र है जो सारे जगत् की रक्षा के लिये सदा सावधान (गरजता) रहता है ॥१६॥

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां क्व कर्मप्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते । अतस्त्वां सम्प्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः ॥ २० ॥

हे भगवन् ! जैसे लोक में कोई किसी को कर्ज देता है तो एक ऐसा भी साक्षी बनता है कि कर्जदार के मर जाने आदि किसी कारण पर वही देता है । ऐसे ही हे नाथ ! यज्ञ करने वाले लोग यज्ञों के फल देने में प्रतिभू (साक्षी) आपको देखकर तथा श्रुतियों (वेदों) में श्रद्धा कर कर्मों में कमर बांधकर तैयार रहते हैं । कारण यह है कि यज्ञादि के कर्मफलों के नष्ट हो

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

जाने पर भी आप फलदाता बराबर जागते ही रहते हैं। यदि यह कहें कि कर्म फल देता ही है, तो प्रभो ! भला नष्ट हुआ कर्म चैतन्य पुरुष की आराधना के बिना कहीं फलता है ? अर्थात् नहीं ही फलता है, इससे यह सिद्ध हुआ कि आप ही सभी कर्मों के फलदाता हैं ॥ २० ॥

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृतामृषीणामार्त्विज्यं शरणद ! सदस्याः सुरगणाः । क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो ध्रुवं कर्तुः श्रद्धा विधुरमभिचाराय हि मखाः ॥ २१ ॥

हे शरणद ! (शरण देने वाले !) जिस यज्ञ में कर्मकांड-कुशल तथा प्रजापति होने से सम्पूर्ण देहधारियों का स्वामी राजा दक्ष प्रजापति जैसा यजमान था तथा त्रिकालदर्शी भृगु आदि महर्षिगण ऋत्विज थे एवं ब्रह्मा आदि देवगण जहाँ सदस्य थे, ऐसे सर्वसम्पन्न यज्ञ का भी आपकी अप्रसन्नता के कारण नाश हो गया। आप यद्यपि यज्ञों के स्वर्ग आदि फल देने के व्यसनी हैं, परन्तु अवज्ञा से उन्होंने अपने यज्ञ के नाश का कारण बना दिया। हे प्रभो ! यह निश्चय है कि यज्ञ के फल देने वाले आपमें श्रद्धा का न होना यजमान के नाश का कारण हो जाता है ॥२१॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

प्रजानाथं नाथ ! प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं ...

धुमृष्यस्य वपुषा । धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्राकृतममुं त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृगव्याधरभसः ॥ २२ ॥

हे नाथ ! कामुक पिता के व्यभिचार की प्रवृत्ति देखकर धर्म के भय से हरिणी रूप धारण की हुई अपनी पुत्री से व्यभिचार की इच्छा से मृगरूप धारण किये ब्रह्मा के पीछे पीछे आज भी आपका व्याधरूपी बाण उनके डर जाने पर भी आकाश में भी उनका पीछा नहीं छोड़ता। अर्थात्—मृगशिरा नक्षत्र के नाम से ब्रह्मा तथा आर्द्रा नक्षत्र के रूप से उनके पीछे रहने वाला आपका बाण आज भी आकाश में दिखाई पड़ रहा है।

ऐसी पुराण की कथा है कि अत्यन्त सुन्दरी अपनी कन्या सतरूपा के साथ ब्रह्मा ने बलात्कार व्यभिचार करना चाहा, तब कन्या डर कर मृगी बन गयी । तब उन्होंने मृग रूप धारण कर व्यभिचार करना चाहा । उस समय न्यायकर्ता शिवजी का बाण व्याध के रूप से उनके पीछे पड़ा, जो आज भी मृगशिरा और आर्द्रा नक्षत्र के रूप में दोनों वर्तमान हैं ॥२२॥

स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणवत् पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन ! पुष्पायुधमपि । यदि स्त्रैणं देवी यमनिरतदेहार्धघटनादवैति त्वामद्धा बत

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

वरद ! मुग्धा युवतयः ॥ २३ ॥

हे पुरमथन ! हे यमनिरत ! (यम, नियम, आसन, आदि अष्टाङ्गयोग-परायण !) पार्वती के शरीर-सौन्दर्य्य से परम योगी आपको वश करने की आशा से जिस कामदेव ने बाण उठाया था उस धनुषधारी को तृण के समान जलते हुय देखकर भी पार्वती आधे देह में धारण करने के कारण सब योगियों में श्रेष्ठ आपको स्त्रैण (स्त्री में आसक्त) मानती हैं। अर्थात् सोचती हैं कि यदि शिवजी हमारे में आसक्त न होते तो हमें अपने आधे अङ्ग में नहीं रखते। वरद ! (वरों के देने वाले !) सही है, युवतियाँ स्वभाव से ही मुग्धा (भोली-भाली होती हैं तथा स्त्रियों का भोलापन एक भूषण है। परन्तु आप तो परम योगी संसार से अलग हैं ॥२३॥

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर ! पिशाचाः सहचराश्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटी परिकरः अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं तथापि स्मर्तॄणां वरद ! परमं मङ्गलमसि ॥ २४ ॥

हे स्मरहर ! (हे कामदेव के नाश करने वाले !) श्मशानों में क्रीडा करना, भूत, प्रेत,

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

पिशाचों को साथ में रखना, चिता की भस्म शरीर में लेप करना, मनुष्यों के शिर की हजारों

हड्डियों की माला पहिनना आदि अमङ्गल चरित्र आप में हैं, वे आपके पास रहें सही। किन्तु हे वरद ! स्मरण करने वालों के लिये वही आपका स्वरूप परम मङ्गल का देने वाला है। अतः आप मङ्गल की कामना वालों से सदा याद करने लायक हैं ॥२४॥

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमभिधायात्तमरुतः प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः। यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्यामृतमये दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किलभवान् ॥२५॥

हे वरद ! मन को बाहरी व्यापारों से रोककर अन्तर्मुखीवृत्ति बनाकर विधिपूर्वक वायु को ग्रहण करने वाले अर्थात् प्राणायम में लगे हुये, तथा ध्यान से पूर्ण रोम-रोम पुलकित है जिनका, एवं हर्ष के आँसुओं से भरे नेत्र वाले अष्टाङ्गयोग युक्त योगी को अमृतमय तालाब में डुबकी लगाने से जो आनन्द होता है, वैसा ही आनन्द अनुभव कर सत् चित् आनन्द स्वरूप मन एवं वाणी से परे जिस किसी तत्त्व (अर्थात् जिसका यह नहीं कहा जा सकता कि यह रूप है, यह है) को अपने में धारण करते हैं। वह हे प्रभो ! आप ही हैं--जिसका वे ध्यान कर परमानन्द को प्राप्त करते हैं ॥२५॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहस्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणि-रात्मा त्वमिति च । परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रति गिरम् न विद्मस्त-त्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥२६॥

हे प्रभो ! तुम सूर्य हो, तुम चन्द्र हो, तुम वायु हो, तुम अग्नि हो, तुम जल हो, तुम आकाश हो, तुम्हीं पृथ्वी हो, एवं क्षेत्रज्ञ आत्मा भी तुम्हीं हो, ऐसा जैसा कि शास्त्रों में आपकी मूर्तियाँ बतायी गई हैं। ऐसा ही परिणातबुद्धि (पकी हुई बुद्धि) वाले माप करके आपको मानते हैं। परन्तु हे भगवान् ! मैं नहीं समझता कि इस संसार में कौन ऐसा पदार्थ है जो आप नहीं हैं। अर्थात् सभी पदार्थ आप ही का स्वरूप है। आपसे भिन्न कुछ नहीं है ॥२६॥

त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरानकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्ती-र्णविकृतिः । तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः समस्तं व्यस्तं त्वां शरणद! गृणात्योमितिपदम् ॥२७॥

हे शरणद ! (दुखियों को अभयदान देने वाले !) ओम् यह पद तीनों वेदों तथा तीनों उदात्त, अनुदात्त, स्वरित अथवा जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति (वृत्तियों एवं तीनों (भूः भुवः स्वः)

CC-0.Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

लोकों और तीनों देवताओं को अपने स्वरूप में धारण करता हुआ समस्त (समास अर्थात् अ उ म् का कर्मधारयसमास) के रूप से तथा व्यस्त (अलग अलग अकार, उकार, मकार) के रूप से अर्थात् ऋग्वेद, जाग्रदवस्था, भूलोक एवं ब्रह्मा ये अकार के अर्थ हैं। यजुर्वेद स्वप्नावस्था भुव लोक तथा विष्णु ये उकार के अर्थ हैं। सामवेद सुषुप्ति अवस्था स्वर्गलोक, हर ये मकार के अर्थ हैं। यह उपनिषदों में बताया गया है। ऐसा ओम् पद समस्तरूप (अर्थात् एकरूप) तथा व्यस्त रूप (अर्थात् अनेक रूप वाले) अखण्ड चैतन्य रूप को सदा गाता है ॥२७॥

भवश्शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सहमहांस्तथा भीमेशानाविति यदभिधा-नाष्टकमिदम् । अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देवश्रुतिरपि प्रियायास्मै धाम्ने प्रणि-हितनमस्योऽस्मिभवते ॥२८॥

हे शरणद ! हे देव ! भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र (महता सह वर्तते सहमहान्) महादेव और भीम, ईशान आदि आपका जो नामाष्ट है, इसके प्रतिनामों के गुणगान में देवगण तथा श्रुतियाँ (वेद) अपि शब्द से शास्त्र पुराणादि सभी पूर्णरूप से लगे रहते हैं। हे भगवन् ! ऐसे

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

प्रभु के योग्य पूजन में अपने को असमर्थ समझकर मैं उस तेज का मन, वाणी एवं शरीर से केवल नमस्कार ही कर रहा हूँ ॥२८॥

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव ! दविष्ठाय च नमो नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर ! महिष्ठाय च नमः । नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन ! यविष्ठाय च नमो नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति सर्वाय च नमः ॥२९॥

हे प्रियदेव ! (निर्जन-वन-विहार-प्रेमी !) अत्यन्त निकटवर्ती एवं अत्यन्त दूरवर्ती आपके लिये बार बार नमस्कार है । हे स्मरहर ! (कामदेव के नाश करने वाले !) अत्यन्त लघु तथा परम महान् आपको बार बार नमस्कार है । हे त्रिनयन ! [तीन नेत्र वाले !] अति वृद्ध एवं अति युवा आपको बार बार नमस्कार है तथा हे भगवन् ! यह जगत् है जिसका; जगत् रूप है जो ऐसे प्रभु को बारबार नमस्कार है ॥ २९ ॥

बहुलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः । जनसुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥ ३० ॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

हे भगवन् ! संसार की सृष्टि के लिए रजोगुणप्रधान ब्रह्मा की मूर्ति धारण करने वाले आपके लिए बार बार नमस्कार है। जीव मात्र के सुख के लिए सतोगुण प्रधान विष्णुरूपधारी आपको नमस्कार है। सबके नाश की इच्छा से तमोगुणप्रधान हर रूप धारण करने वाले आपको बार बार नमस्कार है। एवं माया से परे तथा तीनों गुणों से रहित आपको वार-बार नमस्कार है। अर्थात् निर्गुण होते हुए भी आवश्यकता पर सगुण रूप धारण करने वाले आपके लिए बार-बार नमस्कार है ॥ ३० ॥

कृशपरिणतिचेतः क्लेशवश्यं क्व चेदम् क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनी शश्वदृद्धिः। इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधाद् वरद ! चरणयोस्ते वाक्य-पुष्पोपहारम् ॥ ३१ ॥

श्रीलक्ष्मीधर - विद्यामन्दिर

हे वरद ! दुर्बल परिणामवाला एवं अत्यन्त क्लेश के वश में रहने वाला कहाँ हमारा क्षुद्र चित्त, कहाँ आपकी बढ़ी-चढ़ी हर एक गुणों की सीमाओं को लाँघने वाली ऋद्धियाँ, तो भला स्तुति कैसे करूं ? ऐसे चकित (मन्द) मुझको 'मेरी भक्ति' चमत्कार युक्त बनाकर आपके चरणों में यह वाक्यरूपी फूलों की माला सेवा में सादर अर्पित कराई है। अर्थात् हे प्रभो ! यह पूर्वोक्त

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

स्तुति मेरे सामर्थ्य से बाहर रही परन्तु आपके विषय में जो मेरी भक्ति है उसने दृढ़ बनाकर यह स्तुति करायी है। जैसे 'पुष्प' रस लेने वाले भौंरे तथा पथिक को अपनी गन्ध से सुखी करता है, उसी तरह यह 'स्तुति' भक्त रसिकों को तथा सुनने वाले को यथायोग्य सुख देती है ॥ ३१ ॥

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे सुरतरुवरशाखा लेखनीपत्र-मुर्वी। लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं तदपि तव गुणानामीश ! पारं न याति ॥ ३२ ॥

हे ईश ! (सर्व समर्थ !) समुद्र रूपी पात्र (दावात) में काले पर्वत के समान कज्जल (स्याही) हो, और सुरतरुवर (कल्पवृक्ष) की शाखा की लेखनी (कलम) हो, तथा सम्पूर्ण पृथ्वी पत्र (कागज) हो इन सबको लेकर साक्षात् सरस्वती भी निरन्तर लिखा करें तब भी हे प्रभो ! आपके गुणों का पार नहीं पा सकतीं। तो हम सरीखे क्षुद्रजन की क्या बात है। (अर्थात् आप अपरिमित गुणवाले हैं) ॥ ३२ ॥

असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौलेर्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य ।
CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri
सकलगुणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेत

राक्षस, देवता एवं मुनीन्द्रों से पूजित तथा ललाट में हैं चन्द्रमा जिनके ऐसे तथा जिनके गुणों की महिमा यहाँ एक माला के रूप में गूंथी गई है, ऐसे निर्गुण ईश्वर के इस सुन्दर स्तोत्र को पुष्पदन्त नामक यक्षराजने अलघुवृत्तैः (बहुत बड़े परिश्रम से अथवा शिखरिणी आदि छन्दों से) बनाया ॥ ३३ ॥

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत् पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान्यः । स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान्कीर्तिमांश्च ॥ ३४ ॥

जो शुद्ध हृदय वाला पुरुष परम भक्ति पूर्वक धूर्जटि (महादेव) के इस पवित्र स्तोत्र का प्रतिदिन पाठ करता है वह शिवलोक में रुद्रों के समान होता है, अर्थात् उसकी पूजा होती है, और इस लोक में अत्यन्त धन, आयु, पुत्र एवं यश आदि को प्राप्त करता है । अर्थात् दोनों लोक उसके बन जाते हैं ॥ ३४ ॥

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः । अघोरान्नापरो मंत्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ॥ ३५ ॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

श्री महादेव जी से बढ़कर कोई देवता नहीं है। महिम्नस्तोत्र से बढ़कर कोई स्तोत्र नहीं है। अघोर मन्त्र से बढ़कर कोई मंत्र नहीं है। अघोर मंत्र वैदिक मंत्र है। गुरु से बढ़कर कोई तत्त्व नहीं है॥ ३५॥

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः। महिम्नस्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥ ३६॥

दीक्षा (ज्ञान के लिए गुरु से मंत्र लेना), दान, तप, तीर्थ, ज्ञान और यज्ञ करना आदि क्रियायें महिम्नस्तोत्र के पाठ की सोलहवीं कला से समान भी नहीं हैं॥ ३६॥

कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः शशिधरवरमौलेर्देवदेवस्य दासः। स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात् स्तवनमिदमकार्षीद्दिव्यदिव्यं महिम्नः॥ ३७॥

कुसुमदर्शन (पुष्पदन्त) नामक सब गंधर्वों के राजा, बाल चन्द्रमा को ललाट में धारण करने वाले देवों के देव (महादेव) के भक्त थे। वह इन्हीं महादेव जी के कोप के कारण अपने

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

महत्त्व से गिर गये।। पुनः उद्धार के लिए शङ्कर जी की महिमा का परमदिव्य स्तोत्र बनाया ॥ ३७ ॥

आसमाप्तमिदं स्तोत्रं पुण्यं गंधर्वभाषितम् । अनौपम्यं मनोहारि शिव-मीश्वरवर्णनम् ॥ ३८ ॥

अनुपम (अर्थात् जिसके उपमा की कोई वस्तु है ही नहीं ऐसा) एवं मन को हरने वाला परम मधुर शिव (कल्याण) स्वरूप यह समाप्तिपर्यन्त ईश्वरवर्णनात्मक पवित्र स्तोत्र गन्धर्वराज से कहा गया ॥ ३८ ॥

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैकहेतुम् पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः । व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम् ।३९।

पुष्पदन्त का बनाया हुआ अमोघ (व्यर्थ नहीं होने वाला) बड़े-बड़े देवताओं और मुनियों से पूज्य और स्वर्ग (सुख) तथा मोक्ष [आवागमन से छुटकारा] को देने का कारण जो यह स्तोत्र है इसको मनुष्य एकाग्रचित्त हो एवं हाथ जोड़कर यदि पढ़े तो मार्ग में किन्नरगण द्वारा स्तुति [प्रशंसा] प्राप्त करता हुआ श्री शिवजी के पास पहुँच जाता है ॥३९॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन स्तोत्रेण किल्बिषहरेण हरप्रियेण । कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥४०॥

श्रीपुष्पदन्त के मुख-कमल से निकले हुए सब पापों के दूर करने वाले श्री शिवजी के प्रिय स्तोत्र के कण्ठस्थपाठ तथा एकाग्रचित्त के पाठ से भूतों के नाथ श्री महेश जी अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। (अर्थात् यह स्तोत्र कंठ करने से श्री शिवजी बहुत प्रसन्न होते हैं) ॥४०॥

इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः । अर्पिता तेन मे देवः प्रीयताञ्च सदाशिवः ॥४१॥

यह वाणीरूपी पूजा श्रीशङ्कर भगवान् के चरणों में सादर समर्पित है इससे श्री सदाशिव (कल्याण स्वरुप) देवों के ईश मुझ पर प्रसन्न होवें ॥४१॥

तव तत्वं न जानामि कीदृशोऽसि महेश्वर ! यादृशोऽसि महादेव तादृशाय नमो नमः ॥४२॥

हे महेश्वर ! आप कैसे हैं ? क्या रुप है ? कितने गुण हैं ? इत्यादि मैं नहीं जातना। आप जैसे हैं वैसे ही के लिए नमस्कार है ॥४२॥

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

एककालं द्विकालं वा त्रिकालं यः पठेन्नरः । सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥ ४३ ॥

एक (प्रातः) अथवा दो काल (प्रातः, दोपहर) अथवा तीन काल (प्रातः, दोपहर, सायं) कभी भी इस स्तोत्र को जो पढ़ता है वह सब पापों से छुटकारा पाकर श्रीशिवजी के लोक में पूजा प्राप्त करता है ॥ ४३ ॥ श्री शिवार्पणमस्तु ॥

❀ श्रीशिवमहिम्नस्तोत्र की कथा ❀

ऐसी कथा है कि कोई गन्धर्वराज किसी राजा के अन्तपुर उपवन (स्त्रियों के बाग) के फूल प्रतिदिन चुराकर ले जाया करता था। कोई उसे देख नहीं पाता था। राजा ने उस पुष्प चोर का पता लगाने के लिये यह निश्चय किया कि शिवनिर्माल्य (मूर्ति से उतरे हुए फूल-माला आदि का नाम निर्माल्य है) के लाँघने से चोर की अन्तर्धान (छिपने वाली) आदि शक्तियाँ नष्ट हो जायंगी। यह सोचकर शिवजी पर चढ़ी हुई फूल-माला वाटिकाद्वार पर बिखरवादी। इसका फल यह हुआ, कि इसके बाद वह गन्धर्वराज पुष्पवाटिका में प्रवेश करते ही कुण्ठितशक्ति सा हो गया। उसने समाधिद्वारा यह समझ लिया कि मेरी वह शक्ति शिवनिर्माल्य के लाँघने से ही स्तब्ध सी हो

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

चली है। यह सोचकर परम दयालु भूतभावन श्रीशङ्कर भगवान् की यह वर्णन रुपी महिमा (महिम्न-स्तोत्र का करना प्रारम्भ किया। इससे निर्माल्य तथा शिव-स्तुति को विशेष महत्ता सिद्ध हुई।

स्तोता का गर्वराहित्य

स्तुति उसे कहते हैं जिसमें स्तोतव्य का पूर्ण गुणगान हो (गुणकथनं स्तुतिः) और पूर्ण गुण-गान तभी हो सकता है जब कि पूर्ण गुणका ज्ञान हो। यहाँ बहुत बड़ा वैषम्य इस बात का है कि कहाँ भगवान् के अनन्त गुण, जिनका पूर्ण ज्ञान आकाशपुष्प के सरीखे असम्भव, और साधारण व्यक्ति से की गयी स्तुति, दोनों में महान् अन्तर है अर्थात् पूर्ण गुणों की जानकारी न होने से योग्य स्तुति नहीं हो सकती। एवं स्वरूप के अयोग्य स्तुति यदि करें तो उपहास होता है। इस शङ्का को दूर करने की दृष्टि से गन्धर्वराज श्री पुष्पदन्त जी ने अपने में गर्व का अभाव सिद्ध करते हुए श्री महादेवजी की स्तुति करना प्रारम्भ किया।

श्रीकाकभुशुण्डिगुरु (लोमश) कृतं रुद्राष्टकम्

नमामीशमीशाननिर्वाणरूपम् । विभुं व्यापकं ब्रह्म वेदस्वरूपम् ॥ अजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहम् । चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहम् ॥ निराकारमोङ्कारमूलं तुरीयम् । गिराज्ञानगोतीतमीशं गिरीशम् ॥ करालं महाकालकालं कृपालम् । गुणागारसंसारपारं नतोऽहम् ॥ तुषाराद्रिसंकाशगौरं गभीरम् ।

CC-0 Pt Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

मनोभूतकोटिप्रभाश्रीशरीरम् ॥ स्फुरन्मौलिकल्लोलिनीचारुगङ्गा । लसद्भालबालेन्दु कण्ठे भुजङ्गा ॥
चलत्कुण्डलं शुभ्रनेत्रं विशालम् । प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालुम् । मृगाधीशचर्म्माम्बरं मुण्डमालम्
प्रियं शङ्करं सर्वनाथं भजामि । प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशम् । अखण्डं अजं भानुकोटिप्रकाशम्
त्रयःशूलनिर्मूलनं शूलपाणिम् । भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यम् । कलातीतकल्याण कल्पान्तकारी ।
सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी । चिदानन्दसन्दोहमोहापहारी । प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥
न यावद् उमानाथ पादारविन्दम् । भजन्तीह लोके परे वा नराणाम् । न तावत्सुखं शांति सन्ताप-
नाशम् । प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं । न जानामि योगं जपं नैव पूजाम् । नतोऽहं सदा सर्वदा
शम्भु तुभ्यम् । जराजन्मदुःखौघतातप्यमानम् प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो ॥

रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये ।
ये पठन्ति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥

अथ विल्वाष्टक स्तोत्रम्

त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रंच त्रियायुधम् । त्रिजन्म पाप संहारमेक विल्वं शिवार्पणम् ।१।
त्रिशाखै विल्वपत्रैश्च ह्यच्छिद्रैः कोमलै शुभः । शिव पूजां करिष्यामि ह्येक विल्वं शिवार्पणम् ।२।

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

अखंड विल्वपत्रेण पूजिते नन्दिकेश्वरे । शुद्धन्तिसर्वपापेभ्यो ह्येक विल्वं शिवार्पणम् । ३ ।
शालिग्राम शिलामेकां विप्राणां जातु अर्पयेत् । सोम यज्ञ महा पुण्यं ह्येक विल्वं शिवार्पणम् ।।४।।
दन्तिकोटि सहस्त्राणि वाजपेय शतानिच । कोटि कन्या महा दानं ह्येक विल्वं शिवार्पणम् ।।५।।
लक्ष्म्याः स्तनत उत्पन्नं महादेवस्य च प्रियम् । विल्व वृक्षं प्रयच्छामिह्येक विल्वं शिवार्पणम् ।
। ६ । दर्शनं विल्ववृक्षस्य स्पर्शनं पापनाशनम् । अघोर पाप संहारं ह्येक विल्वं शिवार्पणम् ।७।
मूलतो ब्रह्मरूपाय मध्यतो विष्णुरूपिणे । अग्रतः शिवरूपाय ह्येक विल्वं शिवार्पणम् ।८। विल्वाष्टक
मिदं पुण्यं यःपठेच्छिव सन्निधौ । सर्व पाप विनिर्मुक्तः शिवलोक मवाप्नुयात् ।६।

अथ शिवापराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

श्री गणेशाय नमः । ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् । पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् । १ ।

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

श्री गणेशाय नमः ।

शिवताण्डवस्तोत्रप्रारम्भः

श्री ... -विद्यामन्दिर
... जोशी
५८२७
शिव.
४२

जटाटवीगलज्जलप्रवाह पावितस्थले गलेऽवलम्ब्यलम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम् ॥ डमड्डमड्डमड्डमन्निना-
दवड्डमर्व्वयं चकार चँडताँडव तनोतुनश्शिवश्शिवम् ॥ १ ॥ जटाकटाहसम्भ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरीविलोलवी-
चिवल्लरीविराजमानमूर्द्धनि ॥ धगद्धगद्धगज्वलल्ललाटपट्टपावके किशोरचंद्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम ॥ २ ॥
धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुरस्फुरद्दिगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे ॥ कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्द्धरापदि
कचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि ॥ ३ ॥ जटाभुजङ्गपिंगलस्फुरत्फणामणिप्रभाकदम्बकुंकुमद्रवप्रलिप्तदि-
ग्वधूमुखे ॥ मदान्धसिन्धुरस्फुरत्वगुत्तरीयमेदुरे मनोविनोदमद्भुतम्बिभर्त्तु भूतभर्त्तरि ॥ ४ ॥ ललाटचत्वर-
ज्वलद्धनञ्जयस्फुलिंगभानिपीतपञ्चसायकन्नमन्निलिम्पनायकम् ॥ सुधामयूखरेखया विराजमानशेखरं महः कपा-
लिसम्पदे सरिज्जटालमस्तु नः ॥ ५ ॥ सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखरप्रसूनधूलिधोरणीविधूसरांघ्रिपीठभूः ॥
भुजंगराजमालया निबद्धजाटजूटकः श्रिये चिराय जायताञ्चकोरबन्धुशेखरः ॥ ६ ॥ करालभालपट्टिकाधगद्धग-
द्धगज्ज्वलद्धनञ्जयाहुतीकृतप्रचँडपञ्चसायके ॥ धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रकप्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने
रतिर्म्मम ॥ ७ ॥ नवीनमेघमंडलीनिरुद्धदुर्द्धरस्फुरत्कुहूनिशीथिनीतमःप्रबन्धबन्धुकन्धरः ॥ निलिम्पनिर्झरीध-

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

रस्तनोतु कृत्तिसुन्दरः कलानिधानबन्धुरः श्रियज्जगद्धुरन्धरः ॥ ८ ॥ प्रफुल्लनीलपङ्कजप्रपञ्चकालिमप्रभावलम्बिकण्ठकन्दलीरुचिप्रबद्धकन्धरम् ॥ स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे ॥ ९ ॥ अखर्व्वसर्व्वमङ्गलाकलाकदम्बमञ्जरीरसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम् ॥ स्मरान्तकम्पुरान्तकम्भवान्तकम्मखान्तकं गजान्तकान्धकान्तकन्तमन्तकान्तकंभजे ॥ १० ॥ जयत्यदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजंगमश्वसद्विनिर्ग्गमक्रमस्फुरत्करालभालहव्यवाट् ॥ धिमिन्धिमिन्धिमिन्ध्वनन्मृदंगतुङ्गमङ्गलध्वनिक्रमप्रवर्त्तितप्रचंडताडवः शिवः ॥११॥ दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजंगमौक्तिकस्रजोर्गरिष्ठरत्नलोष्ठयोस्सुहृद्विपक्षपक्षयोः ॥ तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः समप्रवृत्तिकः कदा सदाशिवं भजाम्यहम् ॥ १२ ॥ कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुंजकोटरे वसन् विमुक्तदुर्मतिस्सदा शिरस्थमंजलिं वहन् ॥ विलोललोललोचनाललामभाललग्नकं शिवेति मन्त्रमुच्चरन् सदा सुखीभवाम्यहम् ॥ १३ ॥ निलिम्पनाथनागरीकदम्बमौलिमल्लिकानिगुम्फनिर्भरक्षरन्मधूष्णिकामनोहरः ॥ तनोतु नो मनोमुदं विनोदिनीमहर्निशं परश्रियः परम्पदन्तदंगजत्विषाञ्चयः ॥१४॥ प्रचंडवाडवानलप्रभाशुभप्रचारिणीमहाष्टसिद्धिकामिनीजनावहूतजल्पना ॥ विमुक्तवामलोचनाविवाहकालिकध्वनिः शिवेति मन्त्रभूषणा जगज्जयाय जायताम् ॥ १५ ॥

❀ इति ❀

विशाल कार्यालय—नारायण कोटि, गढ़वाल ।

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

❀ शिवपञ्चाक्षरस्तोत्रम् ❀

श्रीगणेशायनमः ॥ नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय भस्मांगरागाय महेश्वराय ॥ नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय तस्मै नकाराय नमः शिवाय ॥ १ ॥ मन्दाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय नन्दीश्वरप्रथमनाथमहेश्वराय ॥ मन्दार-पुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय तस्मै मकाराय नमः शिवाय ॥ २ ॥ शिवाय गौरीवदनाब्जवृन्दसूर्याय दक्षाध्वरनाश-काय ॥ श्रीनीलकंठाय वृषध्वजाय तस्मै शिकाराय नमः शिवाय ॥ ३ ॥ वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमार्यमुनीन्द्रदेवा-र्चितशेखराय ॥ चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय तस्मै वकाराय नमः शिवाय ॥ ४ ॥ यक्षस्वरूपाय जटाधराय पिनाकहस्ताय सनातनाय ॥ दिव्याय देवाय दिगम्बराय तस्मै यकाराय नमः शिवाय ॥ ५ ॥ पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं यः पठेच्छिवसन्निधौ ॥ शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते ॥ ६ ॥ इति.

❀ शिव–स्तुति ❀

पशूनां पतिं पापनाशं परेशं, गजेन्द्रस्यकृत्तिं वसानंवरेण्यम् ।
जटाजूटमध्ये स्फुरद्गांगवारिं, महादेवमेकं स्मरामि स्मरारिम् ॥
महेशं परेशं सुरारातिनाशं विभुं विश्वनाथं विभूत्यंग भूषम् ।
विरूपाक्षमिन्द्वर्कवह्नित्रिनेत्रं सदानन्दमीड़े प्रभुं पंचवक्त्रम् ॥

पशुपति, पापनाशक, परमेश्वर, गजचर्मधारी, सर्वश्रेष्ठ, जिनके जटाजूट में गंङ्गाजल विराजमान है, एकमात्र स्मरारि (कामदेव के शत्रु) महादेव का मैं स्मरण करता हूँ । महेश, देवाधिदेव, दैत्यों के विनाशक, सर्वव्यापक, विश्व के नाथ, विभूति जिनकी अङ्गभूषा है, विरुपाक्ष, सूर्य, चन्द्र और अग्निरूपी तीन नेत्रों वाले, सदानन्दमय, पंचमुख प्रभु (शङ्कर) का मैं स्तवन करता हूँ ।

—श्रीविशालमणिशर्मा उपाध्याय

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri

॥ इति श्रीशिवमहिम्नस्तोत्र समाप्त ॥

विशाल कार्यालय—नारायणकोटि, गढ़वाल ।

CC-0 Pt. Chakradhar Joshi and Sons, Dev Prayag. Digitized by eGangotri